अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

पत्रांक : मेमो / अ0बौ0के0 / 13 / 2020 दिनांक 30.04.2020

अष्टावक्र – विश्राम का वेदान्त (2)

करोना या इस जैसी महामारी से बचाव हेतु अब कुछ ऐसे ठोस कदम उठाने होंगे जिससे ऐसी घटनाओं की आवृत्तियों को रोका जा सके। वैश्विक समस्या का समाधान भी वैश्विक ही हो सकता है। वैश्विक समस्याओं के समाधान हेतु आज मैत्री, करूणा, मुदिता तथा उपेक्षा द्वारा चित्त के परिकर्म पर अवलम्बित विश्व व्यवस्था की आवश्यकता है तथा इस व्यवस्था को मूर्तमान बनाने के अध्वा के अन्तरायों (मार्ग की बाधाओं) पर प्रत्येक दृष्टि से विचार अपेक्षित है। कोरोना नें आज निर्विवाद रुप से यह स्थापित कर दिया है कि मनुष्य चाहे वह विश्व के किसी भी स्थान में रहता हो, ***सबके चित्त में पर दुःख की प्रहाणेच्छा (निवारण की इच्छा) अत्यन्त प्रबल है। दुःख के प्रत्यक्ष से दया का आविर्भाव स्वाभाविक है और यह सर्वत्र अप्रतिहत है। जैसे ही 'स्व' के, अधिष्ठान के बोध से 'आत्म आग्रह' का निषेध हो जाता है तो घृणा, द्वेष आदि नकारात्मक प्रवृत्तियाँ स्वतः उन्मूलित हो जाती हैं, उनके उन्मूलन का प्रयास नहीं करना पड़ता है।*** इसलिए कोरोना की व्याप्ति को समझने हेतु हमें दोषावह विश्लेषण से बचना होगा। अष्टावक्र की दृष्टि निश्चित ही

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

हमें सम्यक प्राक्तन अध्वा को समकालीन परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित करने में सहायक हो सकती है।

जनक उस ज्ञान के आकांक्षी हैं जो हमें वास्तविक मुक्ति प्रदान करता है। इस मुक्ति हेतु कोई तर्क या विवेचन या क्रिया की आवश्यकता नहीं होती; रक्त तप्त लौह पिण्ड को हाथ में लेने पर यह समझाने की आवश्यकता नहीं होती कि इसे छोड़ दो नहीं तो हाथ जल जायेंगे। पहली बात तो हम रक्त तप्त लौह पिण्ड को हाथ में लेंगे ही नहीं और अनजाने में यदि ले लिया तो तत्क्षण उसे हाथ से गिरा देते हैं। ज्ञान होने की अवस्था में मुक्ति तत्क्षण घटती है। जनक उस ज्ञान की बात पूछते हैं जो मुक्ति प्रदायी है और जिसकी परिणति वैराग्य में होती है।

यहाँ पर हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि मुक्ति और वैराग्य से हमारा आशय उसके रूढिवादी या प्रत्ययवादी अर्थों से नहीं है। **मुक्ति किसी बंधन से मुक्त नहीं है यह स्वभाव को उपलब्ध होना है,** जिसके लिए हमें किसी तप साधना की आवश्यकता नहीं होती है। इसका यह आशय नहीं है कि हम तप, साधना को निरर्थक मानते हैं, उनका अपना विशिष्ट महत्व है, अपनी अर्थवत्ता एवं आवश्यकता है। मुक्ति को यदि 'किसी से' मुक्त होने के अर्थ में लेंगे तो वह वस्तु होनी चाहिए जिससे मुक्त होना है अर्थात् एक तरफ मुक्त होने वाली सत्ता होगी तो दूसरी तरफ

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

वह सत्ता भी होगी जिससे मुक्त होना है। जनक निश्चित ही ऐसी मुक्ति के आकांक्षी नहीं हो सकते क्योंकि वह जीवन संग्राम से पलायन न करने वाले व्यक्ति हैं। मुक्ति (मोक्ष) और कुछ नहीं है बल्कि स्वभाव को उपलब्ध होना है। कोई कौआ, कौआ होने के लिए तप–साधना नहीं करता क्योंकि वह कौआ है ही। लेकिन यदि उसे कोयल होना है तो निश्चय ही उसे गहन साधना, कड़ा परिश्रम एवं अभ्यास करना पड़ेगा और 'कोयल' होने के बाद उसके समक्ष यह खतरा बना रहेगा कि कहीं वह पुनः च्युत होकर कौआ न बन जाये। ठीक वैसे ही जैसे योग के शीर्ष उपलब्धि पर योगी के समक्ष योग भ्रष्ट होने का संकट रहता है। इस बिन्दु पर हमें उस सिंहश्रावक की कथा का विस्मरण नहीं करना चाहिए जिसका पालन–पोषण भेड़ों के समूह में होने के कारण वह भी 'भेड़' हो गया था। लेकिन जब एक वृद्ध सिंह ने उसे उसका परिचय करा दिया तो **वह 'भेड़' तत्क्षण सिंह हो गया क्योंकि वह सिंह था ही।** उसे अपने सिंह होने को जानने हेतु किसी तप, साधना क्रिया की आवश्यकता न हुई। यह ठीक है जब तक वह अपने को भेड़ समझ रहा होता है तब भी भेड़ बनने हेतु उसने कोई प्रयास न किया था। भेड़ों के समूह में पलने के कारण वह स्वयं को भेड़ मानने लगा था। ***लेकिन जब उसे यह ज्ञान, बोध, अनुभव हुआ कि वह भेड़ न होकर सिंह है तो उसके 'जानने' और 'होने' में कोई अन्तराल न था।*** इसीलिए इस हेतु, किसी भी प्रकार के प्रयास की चर्चा बेमानी ही होती है।

अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

यह 'जानते' ही कि वह सिंह है न कि भेड़, वह तत्काल 'सिंह' हो जाता है अर्थात् 'भेड़' से मुक्त हो जाता है। ठीक इसी तरह जनक **उस 'जानने' (ज्ञान) को जानना चाहते हैं जो उन्हें 'मुक्ति' स्वतेत्रता प्रदान करें क्योंकि यही 'मुक्ति' स्वतंत्रता ही वैराग्य है।** वैराग्य का तात्पर्य जगत को त्याग कर वन जाना नहीं है बल्कि यह 'वीतरागी' होना है। वीतरागिता – राग के अतिक्रमण से ही वैराग्य अविर्भूत होता है।

यहाँ जिस 'ज्ञान, मुक्ति, वैराग्य' के प्रति जनक की उत्कंठा है वह **ज्ञानमीमांसीय न हो अस्तित्वगत है।** इसी अस्तित्वगत अर्थ में जनक 'ज्ञानी' कहे जा सकते हैं क्योंकि उनकी जिज्ञासा एक तरह से निःशब्द है क्योंकि जब उन्होंने जान लिया अर्थात जानने को कुछ शेष न रहा तब उनका चित्त, निर्मल, शांत हुआ, एक तरह से उनकी घर वापसी हुई और 'विश्राम' को उपलब्ध हुए। ***वस्तुतः 'घर' में ही 'विश्राम' होता है अन्यंत्र नहीं। घर में आने पर हम पुनः बालवत हो जाते हैं और विश्राम की सामर्थ्य बालकों में ही होती है।***

कोरोना ने लॉकडाउन के कारण हमें अपने भौतिक घरों में रहने का अवसर प्रदान किया है, जिससे हम थोड़ा बहुत ही सही मनोदैहिक विश्राम पा सकें।

सुशील कुमार तिवारी
(विषेश कार्याधिकारी)
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,

अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

सिद्धार्थनगर।